ममता भंडारी
परियोजना सहायक
जल एवं नवकरणीय ऊर्जा विभाग
भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान रुड़की

संजीव कुमार प्रजापति
विभागाध्यक्ष
जल एवं नवकरणीय ऊर्जा विभाग
भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान रुड़की

एस. के. सिंगल
प्रोफेसर
जल एवं नवकरणीय ऊर्जा विभाग
भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान रुड़की

उत्तराखंड में जल संरक्षण एवं अपशिष्ट जल प्रबंधन: वर्तमान स्थिति और भविष्य की राह

प्रस्तावना

जल जीवन का आधार है और मानव सभ्यता की निरंतरता के लिए सबसे अनिवार्य तत्वों में से एक माना जाता है। हिमालय की गोद में बसा उत्तराखंड, जिसे देवभूमि भी कहा जाता है, अपनी प्राकृतिक नदियों, झरनों और हिमनदों के कारण जल संपन्न प्रदेश है। गंगा और यमुना जैसी जीवनदायिनी नदियों की उत्पत्ति यही से होती है और यह राज्य देश के लिए जल एवं ऊर्जा दोनों की दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण है। किंतु विडंबना यह है कि इतनी समृद्ध जल विरासत रखने के बावजूद उत्तराखंड में जल संकट और जल प्रदूषण की समस्या लगातार बढ़ रही है। तेज़ी से बढ़ती जनसंख्या, शहरीकरण, पर्यटन गतिविधियाँ, औद्योगीकीकरण और बदलते जलवायु परिदृश्य ने इस प्रदेश की नदियों और जल स्रोतों पर गंभीर दबाव डाल दिया है। विशेषकर अपशिष्ट जल का प्रबंधन, उसका उपचार और पुनः उपयोग, आज उत्तराखंड के लिए एक चुनौती ही नहीं बल्कि अस्तित्व का प्रश्न बन गया है।

अपशिष्ट जल प्रबंधन की वर्तमान स्थिति और समस्याएँ

वैश्विक परिदृश्य में देखा जाए तो पूरी दुनिया में हर वर्ष लगभग 380 अरब घन मीटर अपशिष्ट जल उत्पन्न होता है, किंतु उसका मात्र 24 प्रतिशत ही उपचारित होकर पुनः प्रयोग में आ पाता है[1]। भारत की स्थिति और भी गंभीर है। यहांयहाँ प्रतिवर्ष लगभग 33 अरब घन मीटर घरेलू जल का उपभोग होता है, जिसमें से लगभग 26 अरब घन मीटर अपशिष्ट जल के रूप में निकलता है। लेकिन इसका केवल 28 प्रतिशत ही ठीक प्रकार से उपचारित हो पाता है[2]। शेष जल बिना किसी शोधन के नदियों और झीलों में जाकर प्रदूषण फैलाता है। यह परिदृश्य उत्तराखंड जैसे पर्वतीय राज्यों में और भी जटिल हो जाता है, जहाँ पहाड़ी भौगोलिक परिस्थितियाँ जल उपचार अवसंरचना विकसित करने में बड़ी बाधा पैदा करती हैं।

उत्तराखंड प्रतिदिन लगभग 6270 लाख लीटर अपशिष्ट जल उत्पन्न करता है [3–7]। प्रमुख योगदानकर्ता शहर देहरादून, हरिद्वार, ऋषिकेश और उधम सिंह नगर हैं, जहाँ तीव्र शहरीकरण, धार्मिक पर्यटन और उद्योगों का दबाव अत्यधिक है। हरिद्वार और ऋषिकेश जैसे तीर्थस्थलों पर आने वाले लाखों श्रद्धालु और पर्यटक प्रतिदिन भारी मात्रा में जल का उपयोग करते हैं, जिसका एक बड़ा हिस्सा बिना उपचारित हुए सीधे गंगा और अन्य जल जलाशयों में चला जाता है [3,8]। यही कारण है कि गंगा नदी का प्रदूषण स्तर लगातार चिंता का विषय बना हुआ है। इस समस्या से निपटने के लिए राज्य सरकार ने 71 सीवेज ट्रीटमेंट प्लांट (एसटीपी) स्थापित किए हैं, जिनकी कुल स्थापित क्षमता लगभग 4480 लाख लीटर प्रतिदिन है। लेकिन वास्तविक संचालन क्षमता केवल 3450 लाख लीटर है और इनसे वर्तमान में मात्र 1870 लाख लीटर ही उपचारित हो पाता है [3,8]। इसका सीधा अर्थ है कि राज्य में आधे से अधिक सीवेज बिना उपचार के ही बहाया जा रहा है। औद्योगिक इकाइयों के लिए भी तीन कॉमन एफ्लुएंट ट्रीटमेंट प्लांट (सीईटीपी) स्थापित किए गए हैं, जिनकी क्षमता मात्र 130 लाख लीटर प्रतिदिन है और यह 920 उद्योगों को कवर करते हैं [3,8,9]। इन आँकड़ों से स्पष्ट है कि वर्तमान अवसंरचना राज्य के अपशिष्ट जल प्रबंधन की वास्तविक आवश्यकताओं से काफी पीछे है।

उपचारित जल का पुनः उपयोग : अवसर और संभावनाएँ

इस स्थिति के कई प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष प्रभाव देखने को मिलते हैं। अनुपचारित सीवेज नदियों, झीलों और भूमिगत जलस्रोतों को प्रदूषित करता है। परिणामस्वरूप, जलजनित रोग फैलते हैं, जैव विविधता प्रभावित होती है और नदियों की स्वाभाविक शुद्धिकरण क्षमता नष्ट होती है। इसके अतिरिक्त, यह कृषि भूमि में रिस कर मिट्टी की उर्वरता कम करता है और औद्योगिक इकाइयों की वजह से निकलने वाले भारी धातु और रसायन मानव स्वास्थ्य के लिए दीर्घकालिक खतरे पैदा करते हैं। यदि अपशिष्ट जल का वैज्ञानिक ढंग से उपचार कर उसका पुनः उपयोग किया जाए तो यह समस्या अवसर में बदल सकती है। दुनिया के कई देशों में उपचारित जल का प्रयोग सिंचाई, उद्योग, शहरी परिदृश्यों, ऊर्जा उत्पादन और यहाँ तक कि पेयजल के लिए भी किया जा रहा है। वैश्विक स्तर पर लगभग 52 प्रतिशत पुनः उपयोग कृषि में होता है क्योंकि कृषि सबसे बड़े पैमाने पर जल की मांग करती है [10]। उत्तराखंड में भी इस दिशा में अपार संभावनाएँ हैं। हरिद्वार और उधम सिंह नगर जैसे जिलों में पहले से स्थापित एसटीपी से निकलने वाले उपचारित जल का इस्तेमाल खेतों की सिंचाई में किया जा सकता है। उपचारित जल में नाइट्रोजन और फॉस्फोरस जैसे पोषक तत्व प्रचुर मात्रा में पाए जाते हैं, जो फसल वृद्धि में सहायक होते हैं और रासायनिक उर्वरकों पर निर्भरता कम कर सकते हैं। इससे किसानों को आर्थिक लाभ होगा और भूमिगत जल पर दबाव घटेगा [11]।

इसी तरह, औद्योगिक क्षेत्रों में भी उपचारित जल का उपयोग विभिन्न गैर-पीने योग्य कार्यों जैसे बॉयलर फीड, कूलिंग टावर, उपकरण धुलाई, धूल नियंत्रण और बागवानी आदि में किया जा सकता है। इससे उद्योगों की ताज़ा जल पर निर्भरता कम होगी और वे 'ज़ीरो लिक्विड डिस्चार्ज' जैसे मानकों को बेहतर ढंग से प्राप्त कर सकेंगे। पर्यटन क्षेत्र में भी उपचारित जल का उपयोग होटल, रेस्टोरेंट और थीम पार्कों की बागवानी और स्वच्छता कार्यों के लिए किया जा सकता है। इसी तरह निर्माण कार्यों और शहरी हरित पट्टियों में भी इस जल का उपयोग करके बड़ी मात्रा में ताज़ा जल की बचत की जा सकती है।

ऊर्जा क्षेत्र में भी उपचारित जल का नया आयाम उभर रहा है। विश्वभर में कई स्थानों पर अपशिष्ट जल शोधन संयंत्रों में लघु या सूक्ष्म जल विद्युत संयंत्र लगाए गए हैं, जहाँ उपचारित जल के प्रवाह और गिरावट से बिजली उत्पन्न की जाती है [12]। दिल्ली के हैदरपुर और केशोपुर संयंत्र इसके उदाहरण हैं। उत्तराखंड की भौगोलिक परिस्थितियाँ ऐसी परियोजनाओं के लिए अत्यंत उपयुक्त हैं क्योंकि यहाँ प्राकृतिक ढाल और प्रवाह पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध है। यदि देहरादून, हरिद्वार और हल्द्वानी के एसटीपी में इस तकनीक को अपनाया जाए तो यह न केवल ऊर्जा आत्मनिर्भरता की दिशा में कदम होगा बल्कि शोधन संयंत्रों की परिचालन लागत भी घटाएगा।

जल संरक्षण की पहलें और सामुदायिक भागीदारी

अब यदि जल संरक्षण रणनीतियों की बात करें तो उत्तराखंड के संदर्भ में कई राष्ट्रीय एवं स्थानीय पहलें पहले से चल रही हैं। जल शक्ति अभियान, राष्ट्रीय जल नीति 2012, नमामि गंगे, अटल भूजल योजना, अमृत सरोवर मिशन और मनरेगा जैसी योजनाएँ जल संरक्षण और पुनर्भरण पर विशेष बल देती हैं। उत्तराखंड में वर्षा जल संचयन को बढ़ावा दिया जा रहा है। उधम सिंह नगर के सरकारी विद्यालयों में लगाए गए 100 छतवर्षा संचयन ढांचे प्रतिवर्ष लाखों लीटर जल बचाने में सक्षम हैं। इसी तरह आईआईटी रुड़की में लागू किए गए वर्षा जल संचयन मॉडल भी प्रभावी उदाहरण हैं। भूजल पुनर्भरण के लिए रिचार्ज शाफ्ट, रिचार्ज पिटऔर परकोलेशन तालाब जैसी संरचनाएँ बनाई जा रही हैं।

पारंपरिक जल स्रोतों का पुनर्जीवन भी जल संरक्षण का महत्वपूर्ण पहलू है। उत्तराखंड के पहाड़ी इलाकों में धारा, नौला, चाल और खाल जैसे परंपरागत स्रोत सदियों से समुदायों की प्यास बुझाते आए हैं। किंतु उपेक्षा और आधुनिकता के दबाव ने इन्हें नष्टप्राय बना दिया है। यदि इन स्रोतों का वैज्ञानिक तरीके से पुनर्वास किया जाए तो यह न केवल जल संकट कम करेंगे बल्कि ग्रामीण आजीविका और पर्यटन को भी बढ़ावा देंगे। नालों और तालाबों की खुदाई, झीलों का डी-सिल्टिंग व सोख्ता गड्ढों का निर्माण ऐसे प्रयास हैं जो जल उपलब्धता बढ़ाने के साथ-साथ भूमिगत जल भंडार को भी पुनः भरते हैं।

चित्र 1: आईआईटी रुड़की में स्थापित रूफटॉपवर्षा जल संचयन प्रणाली।

(क) (ख)

चित्र 2: (क) धारा और (ख) नौला [13]

हिमालयी क्षेत्र की विशेष परिस्थितियों को देखते हुए यहाँ चेक डैम, रबर डैम और वनीकरण जैसी गतिविधियाँ भी अत्यंत उपयोगी हैं। पहाड़ी ढालों पर बहाव को रोकने के लिए छोटे-छोटे बाँध बनाकर न केवल मिट्टी का कटाव रोका जा सकता है बल्कि भूजल पुनर्भरण और सिंचाई सुविधा भी बढ़ाई जा सकती है। इसी तरह बड़े पैमाने पर पौधारोपण कर वर्षा जल को भूमि में सोखने की क्षमता बढ़ाई जा सकती है। इन सब प्रयासों में समुदाय की भूमिका सबसे महत्वपूर्ण है। महिलाएँ और स्वयं सहायता समूह जल संरक्षण में अग्रणी भूमिका निभा रहे हैं। गाँवों में बनाए गए जल उपयोगकर्ता संघ और पंचायत स्तर पर चलाए गए अभियानों ने सिद्ध किया है कि जब समाज स्वयं जल प्रबंधन की जिम्मेदारी लेता है तो परिणाम अधिक प्रभावी और स्थायी होते हैं। जल संरक्षण केवल सरकारी योजनाओं का विषय नहीं है बल्कि यह जन आंदोलन का स्वरूप लेना चाहिए। जब प्रत्येक नागरिक, प्रत्येक परिवार और प्रत्येक संस्था जल बचाने का संकल्प लेगी तभी यह समस्या स्थायी रूप से हल होगी।

सतत जल प्रबंधन की दिशा में उत्तराखंड का मार्ग

नीतिगत स्तर पर भी कुछ कठोर कदम आवश्यक हैं। निर्माण कानूनों में वर्षा जल संचयन को अनिवार्य करना, उद्योगों के लिए शून्य द्रव अपशिष्ट नीति का कठोर अनुपालन सुनिश्चित करना, शोधन संयंत्रों की क्षमता विस्तार एवं निगरानी, शहरी स्थानीय निकायों की तकनीकी क्षमता वृद्धि, तथा जल गुणवत्ता के लिए सुदृढ़ मॉनिटरिंग तंत्र बनाना समय की मांग है। इसके साथ-साथ लोगों में व्यवहारिक बदलाव लाना भी उतना ही जरूरी है। जल की बर्बादी रोकना, रिसाव की मरम्मत, घरेलू स्तर पर ग्रे वाटर का पुनः उपयोग, सिंचाई में ड्रिप और स्प्रिंकलर तकनीक अपनाना, ये सभी छोटे-छोटे कदम मिलकर बड़े परिणाम ला सकते हैं। जलवायु परिवर्तन की चुनौती इस पूरी चर्चा का अभिन्न हिस्सा है। बढ़ते तापमान, अनियमित वर्षा और ग्लेशियरों का पिघलना उत्तराखंड के लिए नई समस्याएँ खड़ी कर रहे हैं। इस बदलते परिदृश्य में जल का सतत प्रबंधन ही एकमात्र विकल्प है। अपशिष्ट जल को बोझ न मानकर संसाधन के रूप में देखना होगा। इसे ऊर्जा, पोषक तत्व और सिंचाई के जल का स्रोत मानना होगा।

भारतीय हिमालयी क्षेत्र पर निति आयोग और IHCUC13 द्वारा की गई एक रिपोर्ट (2022) के अनुसार, हिमालयी क्षेत्र की 60 प्रतिशत से अधिक आबादी प्राकृतिक झरनों पर निर्भर है, परंतु आधे से अधिक झरने सूख चुके हैं और बाकी में जल प्रवाह

चित्र 3: उधम सिंह नगर में समुदाय के नेतृत्व में जल संरक्षण की पहल (स्रोत: राष्ट्रीय जल मिशन, जल शक्ति मंत्रालय, जल संसाधन विभाग, नदी विकास और गंगा संरक्षण विभाग, भारत सरकार)

लगातार घट रहा है। सर्वेक्षण में पाया गया कि हिमालयी क्षेत्रों में औसतन जल उपभोग मात्र 37 लीटर प्रति व्यक्ति प्रतिदिन है जबकि जल जीवन मिशन के अनुसार यह 55 लीटर होना चाहिए। यह न केवल भौतिक जल अभाव बल्कि सामाजिक-आर्थिक परिस्थितियों का भी संकेत है। रिपोर्ट ने जलवायु परिवर्तन, वनों की कटाई, भूमि उपयोग परिवर्तन और जल संसाधनों के दुरुपयोग को प्रमुख कारण बताया तथा स्प्रिंग रिचार्ज, पारंपरिक तकनीकों और सामुदायिक प्रबंधन को समाधान के रूप में सुझाया।

निष्कर्ष

निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि उत्तराखंड में जल प्रबंधन की समस्या जटिल अवश्य है, किंतु असाध्य नहीं। यह प्रदेश प्राकृतिक जल संपन्नता से परिपूर्ण होने के बावजूद आज तेजी से बढ़ती जनसंख्या, शहरीकरण, औद्योगिकीकरण और जलवायु परिवर्तन के प्रभावों से जूझ रहा है। नदियों और झरनों का प्रदूषित होना न केवल पर्यावरणीय असंतुलन पैदा कर रहा है, बल्कि मानव स्वास्थ्य और आजीविका पर भी प्रतिकूल प्रभाव डाल रहा है। इस स्थिति से निपटने के लिए आवश्यक है कि अपशिष्ट जल को बोझ नहीं, बल्कि संसाधन के रूप में देखा जाए। उपचारित जल का पुनः उपयोग कृषि, उद्योग, ऊर्जा उत्पादन और शहरी उपयोगों में किया जा सकता है, जिससे जल की बचत के साथ-साथ आर्थिक लाभ भी सुनिश्चित होगा। जल संरक्षण के क्षेत्र में प्रौद्योगिकी, नीतिगत सुधार, सामुदायिक भागीदारी और पारंपरिक ज्ञान का समन्वय ही दीर्घकालिक समाधान प्रदान कर सकता है। जब प्रत्येक नागरिक, संस्थान और उद्योग जल के महत्व को समझकर इसके संरक्षण का संकल्प लेंगे, तभी उत्तराखंड सचमुच "जल समृद्ध देवभूमि" के रूप में स्थापित होगा। नदियों की अविरलता, झरनों की जीवनधारा और समुदायों की जल संस्कृति को पुनर्जीवित करना ही आने वाली पीढ़ियों के लिए सबसे बड़ा उपहार होगा

संदर्भ

1. प्रताप, बी। एट अल। विभिन्न पर्यावरण-अनुकूल प्रौद्योगिकियों द्वारा अपशिष्ट जल उत्पादन और उपचार: संभावित स्वास्थ्य खतरे और पर्यावरण सुरक्षा के लिए आगे पुन: उपयोग। केमोस्फीयर 313, 137547 (2023)।
2. आयोग, एन. भारत में शहरी अपशिष्ट जल परिदृश्य। (2022)।
3. कुनियाल, जेसी एट अल।जिला पर्यावरण योजना-हरिद्वार। (2019)।
4. कुनियाल, जे.सी. एट अल। जिला पर्यावरण योजना- चंपावत। (2019)।
5. कुनियाल, जे.सी. एट अल। जिला पर्यावरण योजना - बागेश्वर। (2019)।
6. कुनियाल, जे.सी. एट अल। जिला पर्यावरण योजना-चमोली। 1-71 (2021)।
7. कुनियाल, जे.सी. एट अल।जिला पर्यावरण कार्य योजना उत्तरकाशी की मसौदा रिपोर्ट 85 (2021)।
8. कुनियाल, जे.सी. एट अल।जिला पर्यावरण योजना-देहरादून। (2019)।
9. कुनियाल, जे.सी. एट अल।जिला पर्यावरण योजना-अल्मोड़ा। (2019)।
10. मनिना, जी., गुलहन, एच एंड नी, बीजे अपशिष्ट जल उपचार से जल का पुन: उपयोग: जल क्षेत्र में सर्कुलर इकोनॉमी की ओर परिवर्तन। बायोरेसोर। टेक्नोल। 363, 127951 (2022)।
11. लाहलो, एफजेड, मैके, एचआर, मैके, जी. और अल-अंसारी, टी. तेल और गैस उद्योगों से उपचारित औद्योगिक अपशिष्ट जल और जैव-ठोस का पुन: उपयोग: सार्वजनिक स्वीकृति के नए कारकों की खोज। जल संसाधन। भारत। 26, 100159 (2021)।
12. लासर-इग्लेसियस, आर. एम. एट अल। अपशिष्ट जल प्रणालियों में सतत ऊर्जा उत्पादन के लिए जल विद्युत प्रौद्योगिकी: अनुभव से सीखना। जल 2021, खंड 13, पृष्ठ 3259 13, 3259 (2021)।
13. आईएचसीयूसी। जल संरक्षण और संचयन रणनीतियाँ। नीति आयोग, नई दिल्ली 5, (2022)।